http://krishipravahika.vitalbiotech.org/

कृषि प्रवाहिका: ई-समाचार पत्रिका

e-ISSN: 2583 – 0430

कृषि-प्रवाहिका: ई-समाचार पत्रिका, (2023) वर्ष 3, अंक 5, 1-6

Article ID: 269

जलवायु परिवर्तन की स्थिति एवं असिंचित क्षेत्रों में मोटे अनाज के खेती की संभावनाएं

आशुतोष सिंह एवं अंशुमान सिंह

रानी लक्ष्मी बाई केंन्द्रीय कृषि विश्वविद्यालय, झाँसी, उत्तर प्रदेश-284003

जलवायु परिवर्तन आज के समय में वैश्विक चुनौती बन चुकी है। प्राकृतिक जल–श्रोत, जंगल, वन्यजीव, कृषि योग्य भूमि, चरागाह इत्यादि प्रकिर्तिक संसाधन अच्छे पर्यावरण के घोतक माने जाते है। पिछले कुछ दसकों में इन प्रकिर्तिक संसाधनों के साथ तेजी से छेड़–छाड़ के कारण पारिस्थितिक तंत्र में काफी बदलाव देखने को मिला है, जिसका प्रभाव खेती, पशपालन, मत्स्यपालन एवं दुग्ध उत्पादन पर पड़ा है। वर्षा के आभाव, प्राकृतिक जल–श्रोतों की कमी, जमीन के जलस्तर के कम होने के कारण फसल उत्पादन प्रभावित हुआ है। जलवायु परिवर्तन के कारण समय पर वर्षा, ठंड और गर्मी नहीं होती है, जिसके कारण जन–जीवन प्रभावित हुआ है। पिछले 10–15 वर्षों में ग्लोबल वार्मिंग एवं जलवायु परिवर्तन होने के कारण अनाज उत्पादन प्रभावित हुआ है। घटते जल–स्तर के कारण धान, गेहूं, मक्का, गन्ना जैसी फसलों का उत्तपादन असिंचित क्षेत्रों में नहीं हो पा रहा है। जलवायु परिवर्तन की स्थिति में पोषण खाद्य सुरक्षा को देखते हुए, कम सिंचाई में या बिना सिंचाई के तैयार होने वाली फसलों को बढ़ावा देना आवश्यक हो गया है। जलवायु परिवर्तन और संघर्षों को देखते हुए आज दुनिया में मोटे व पोषक अनाज का की खेती को बढ़ावा दिया जा रहा है। जलवायु परिवर्तन की वजह से उत्पादन में कमी एवं फसलों की ख़राब गुणवत्ता के कारण फसल व्यापर में व्यवधान भी उत्पन्न हो रहा है। विभिन्न अनुसन्धान एवं शोध से स्पष्ट हुआ है कि मोटे अनाज की खेती जलवायु अनुकूल है, जिसकी खेती सूखा प्रभावित व असिंचित क्षेत्रों में आसानी से की जा सकती है। यदि पौष्टिकता के लिहाज से देखा जाय तो मोटे अनाज में प्रोटीन, फाइबर और खनिज की मात्रा चावल और गेंहू की तुलना में अधिक होती है। चूँकि मोटे अनाजों की खेती में ज्यादा पानी की आवश्यकता है, इसलिए मोटा अनाज की खेती टिकाऊ खेती के लिए उपयुक्त है। मोटे अनाज को खेती प्रणाली में शामिल करके, खेती प्रणाली को वैश्विक स्तर पर सतत एवं मजबूत बनाया जा सकता है। मोटे अनाजों की खेती करने से ग्रीन हाउस गैस (जीएचजी) उत्सर्जन में कमी आती है और पोषण से बिना समझौता किए जलवायु अनुकूलता को बढ़ावा मिलता है। भारत में मॉनसून के दौरान अनाज उत्पादन में परिवर्तन को लेकर एक परिमाणात्मक मूल्यांकन में पता चला कि मोटे अनाज खाद्य सुरक्षा और पर्यावरणीय अनुकूलता के लिए एक व्यावहारिक विकल्प हैं।

सर्वाधिकार © मई, 2023; *कृषि प्रवाहिका: ई-समाचार पत्रिका*

1. जलवायु परिवर्तन के कारक

किसी एक भौगोलिक क्षेत्र का लम्बे समय के लिए जो हवामान होता है उसे जलवायु कहते है। लम्बा समय यानी की कुछ दशक या फिर कई सदियाँ जलवायु को अनुकूल बनाने में सहायक होती है। प्राकृतिक संसाधनों से छेड़–छाड़ के कारण होने वाले जलवायु परिवर्तन को पुरे विश्व में देखा जा सकता है। हाल ही में पूरे विश्व का तापमान बढ़ रहा है जिसका असर पूरे विश्व में दिखाई दे रहा है। जलवायु परिवर्तन का तात्पर्य उन बदलावों से है जिन्हें हम लगातार अनुभव कर रहे हैं। जलवायु परिवर्तन अधिक समय में होने वाली जलवायु में दीर्घकालिक परिवर्तनों से है। यह मुख्य रूप से जीवाश्म ईंधन जैसे–कोयला, तेल और प्राकृतिक गैस को जलाने के कारण पृथ्वी के वातावरण में तेजी से बढ़ती ग्रीनहाउस गैसों के कारण होता है। प्राकृतिक गतिविधियाँ जैसे– भूस्खलन, ज्वालामुखी विस्फोट, पृथ्वी का झुकाव, समुद्री तूफान, बाढ़, सूखा आदि से पर्यावरण प्रदूषित होता है तथा वनस्पतियों का विनाश होता है, जो कि जलवायु परिवर्तन का कारण बनता है। मानवीय गतिविधियों में शहरीकरण, औद्योगिकीकरण, वनोन्मूलन, खनिज खनन, जनसंख्या वृद्धि तथा निरन्तर बढ़ती जनसंख्या के कारण भरण–पोषण हेतु अधिकाधिक अन्न उपजाने के लिये रासायनिक कीटनाशकों एवं उर्वरकों भी जलवायु परिवर्तन का कारण है।

जलवायु में आये इन परिवर्तनों के कारणों को दो भागों में बाँटा जा सकता है, पहला–प्राकृतिक और दूसरा–मानवीय गतिविधियाँ हैं। प्राकृतिक कारणों से होने वाले जलवायु परिवर्तन से पर्यावरण प्रभावित होता है तथा मानवीय गतिविधियों द्वारा पर्यावरण प्रदूषित होने से जलवायु प्रभावित होती है। जलवायु परिवर्तन धीरे–धीरे पृथ्वी पर रहने वाले जीवों के लिये प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से अनेक समस्याओं को जन्म देती है। जलवायु परिवर्तन का मुख्य कारण मनुष्य एवं मानवीय गतिविधियाँ ही है। जलवायु परिवर्तन एकाएक होने वाली समस्या नहीं है, सामान्यतः जलवायु में परिवर्तन कई वर्षों में धीरे–धीरे होता है। मनुष्य के द्वारा पेड़ पौधों की लगातार कटाई और जंगल को खेती या मकान बनाने के लिए उपयोग करने के कारण इसका प्रभाव जलवायु में भी पड़ने लगा है। जलवायु में दिखने वाले ये परिवर्तन लंबे समय का परिणाम है जिसके न केवल क्षेत्रीय प्रभाव देखने को मिल रहे हैं बल्कि संपूर्ण विश्व जलवायु परिवर्तन से प्रभावित हो रहा है। जलवायु परिवर्तन की पुष्टि महासागरों का अम्लीकरण भी करता है। वस्तुतः महासागरों की ऊपरी परत द्वारा अवशोषित CO_2 की मात्रा में प्रति वर्ष लगभग 2 बिलियन टन की बढ़ोत्तरी हो रही है, जोकि स्वस्थ जन–जीवन के लिए अच्छा संकेत नहीं है ।

जलवायु परिवर्तन पर अन्तर–सरकारी पैनल (IPCC) के अनुसार, बीसवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में उत्तरी गोलार्द्ध का औसत तापमान विगत 500 वर्षों की तुलना में काफी अधिक था। ग्रीन हाउस गैसों के उत्सर्जन जैसे–कार्बनडाई आक्साइड, मीथेन, नाइट्रस ऑक्साइड, सल्फरडाई ऑक्साइड आदि के उत्सर्जन में वृद्धि पृथ्वी के औसत तापमान में वृद्धि व जलवायु परिवर्तन का प्रमुख कारण है। मानव अपनी प्रगति और उन्नत जीवनशैली बनाने के लिए प्राकृतिक साधन एवं सम्पत्तियों का इस्तेमाल करता है, जिसमें कोयला एक मुख्य साधन सम्पत्ति है। कोयले का इस्तेमाल मानव सदियों से अपने ऊर्जा की ज़रूरत को पूरा करने के लिए करते आ रहा है। औसतन 35% से लेकर 40% तक ऊर्जा की ज़रूरत मानव कोयले से ही करता है। कोयले को जलाने से उसमें से कार्बन मुक्त होता है और यह कार्बन पृथ्वी का तापमान बड़ने का मुख्य कारण है। पृथ्वी को सूरज से जो ऊर्जा मिलती है उसमें से कुछ ऊर्जा पृथ्वी वापस सौरमंडल में भेजती है तथा कार्बन और अन्य गैस मिलकर उस ऊष्णता को पृथ्वी से बाहर जाने नहीं देते। इस वजह से पृथ्वी का तापमान बढ़ रहा है। तापमान के बढ़ने के कारण ध्रुवों और हिमालय पर्वत शृंखला के ऊपर मौजूत हिम काफ़ी तेज़ी से पिघल रहा है, और उसका पानी सीधे समुद्र में आ रहा है। हिम के पिघलने से ग्लेशियर काफ़ी तेज़ी से पीछे की तरफ़ जा रहे है।

जलवायू परिवर्तन के कारण अमेरिका और संयुक्त राज्यों में फ़सलो के उत्पादकता में कमी आयी है और अफ़्रीका, पूर्वी देशों के साथ भारत में मानसून बढने के कारण कुछ फ़सलों की उत्पादकता में वढोत्तरी हो रही और कुछ फ़सलों की उत्पादकता में कमी आयी है। जलवायु परिवर्तन का परिणाम मानव के स्वास्थ्य पर भी पड़ेगा। वडब्लू एच वो ने एक रिपोर्ट में कहा है की तापमान में वृधि होने के कारण स्वसन और हृदय के सम्बंधित रोगों में बढ़ोतरी होगी। जलवायु परिवर्तन के कारण रोगों के जीवाणु भी बढ़ेंगे और उसके साथ ही इन रोग के जीवाणुओं की अलग अलग प्रजातियां भी जन्म लेगी।

चित्रः जलवायु परिवर्तन का एक दृश्य

2. जलवायु परिवर्तन का खेती प्रणाली पर प्रभाव

भारत की अधिकांश कृषि वर्षा आधारित है जिस पर मानसून की अनिश्चितता बनी रहती है। जलवायु परिवर्तन के कारण उच्च तापमान फसलों के वृद्धि की अवधि को कम करता है, और फसलों की श्वसन क्रिया को तीव्र करता है तथा वर्षा में कमी लाता है। साथ ही वर्षा के असामान्य वितरण से कहीं बाढ़ तो कहीं सूखा जैसी स्थितियाँ दृष्टिबोचर हो रही हैं। वायुमंडल में कार्बन डाईऑक्साइड की सांद्रता बढ़ने से गेँहू, चावल, सोयाबीन जैसी अधिकांश खाद्यान फसलों में प्रोटीन एवं अन्य आवश्यक तत्त्वों की कमी देखी गई है। जलवायु परिवर्तन के कारण गर्म लहरों की तीव्रता ने न केवल पशुओं की रोगों के प्रति सुभेद्यता बढ़ाई है बल्कि प्रजनन क्षमता व दुग्ध उत्पादन में भी कमी आई है।जलवायु परिवर्तन मृदा में होने वाली प्रक्रियाओं एवं मृदा–जल के संतुलन को प्रभावित करता है। मृदा–जल के संतुलन में अभाव आने के कारणवश सूखी मिट्टी और शुष्क होती जाएगी, जिससे सिंचाई के लिये पानी की माँग बढ़ जाएगी। बागवानी फसलें अन्य फसलों की अपेक्षा जलवायु परिवर्तन के प्रति अतिसंवेदनशील होती हैं। पिछले 30–50 वर्षों के दौरान कार्बन डाइऑक्साइड की मात्रा 450 पीपीएम (पार्ट्स पर मिलियन) तक पहुँच गई है।

कार्बन डाइऑक्साइड की मात्रा में वृद्धि कुछ फसलों जैसे कि गेहूँ तथा चावल, जिनमें प्रकाश संश्लेषण की प्रक्रिया सी–3 माध्यम से होती है, के लिये लाभदायक है, क्योंकि ये प्रकाश संश्लेषण की प्रक्रिया को तीव्र करती है एवं वाष्पीकरण के द्वारा होने वाली हानियों को कम करती है। परंतु इसके बावजूद कुछ मुख्य खाद्यान्न फसलों जैसे गेहूँ की उपज में महत्वपूर्ण गिरावट पाई गई है, जिसका कारण तापमान में वृद्धि है। जलवायु परिवर्तन के कारण परागणकारी कीटों तथा तितलियों, मधुमक्खियों की संख्या में कमी से कृषि उत्पादन पर नकारात्मक प्रभाव पड़ा है। वैश्विक आबादी बढ़ने के साथ–साथ खाद्यान्नों की मांग में भी इज़ाफा हो रहा है। खाद्य और कृषि संगठन का अनुमान है कि खाद्य आपूर्ति और मांग के बीच अंतर को कम करने के लिये वैश्विक कृषि उत्पादन

2050 तक दोगुना करने की आवश्यकता होगी।

3. आने वाले समय में जलवायु परिवर्तन से भारतीय कृषि एवं जीवन पर असर

जलवायु परिवर्तन आने वाले दशकों में विश्व के साथ भारतीय कृषि, अर्थव्यवस्था, जन–जीवन पर गहरा प्रभाव डालेगा। भारत जैसे कृषि प्रदान देश के लिए मिट्टी की संरचना व उसकी उत्पादकता अहम स्थान रखती है। तापमान बढ़ने से मिट्टी की नमी और कार्यक्षमता प्रभावित होगी। जलवायु में निरंतर परिवर्तन से मिट्टी में लवणता बढ़ेगी और जैव विविधता घटती जाएगी। बाढ़ जैसी प्राकृतिक आपदाओं से जहाँ एक और मिट्टी का क्षरण अधिक होगा वहीं दूसरी ओर सूखे की वजह से बंजरता बढ़ जाएगी। भारत में कृषि प्रमुखतः मौसम पर आधारित है और जलवायु परिवर्तन की वज़ह से होने वाले मौसमी बदलावों का इस पर बेहद असर पड़ता है। जलवायु परिवर्तन के कारण हुई तापमान वृद्धि से कृषि प्रभावित होती है, इसलिये यह ज़रूरी है कि किसानों को यह पता होना चाहिये कि इस समस्या का सामना कैसे किया जाए, कौन सी फसल उगाई जाय।

भारत की कुल कृषि भूमि का 67% भाग मानसून तथा अन्य मौसमों में होने वाली वर्षा पर निर्भर है। कृषि की मौसम पर अत्यधिक निर्भरता की वज़ह से फसलों पर लागत अधिक आती है, विशेषकर मोटे अनाजों की फसलों पर, जिनकी खेती अधिकतर उन क्षेत्रों में होती है जो वर्षा पर निर्भर होते हैं। भारत में 120 मिलियन हेक्टेयर ऐसी भूमि है, जो किसी–न–किसी प्रकार की कमी से ग्रस्त है। लघु तथा सीमांत किसान जलवायु परिवर्तन से सर्वाधिक प्रभावित होते हैं। ऐसा अनुमान लगाया जा रहा है कि भारत में भयंकर सूखे की वज़ह से उन्हें घरेलू आय में 24 से 58% की कमी का सामना करना पड़ सकता है और घरेलू गरीबी में 12 से 33% की वृद्धि हो सकती है। जलवायु परिवर्तन से फसलों की उत्पादकता ही प्रभावित नहीं होगी वरन् उनकी गुणवत्ता पर भी नकारात्मक प्रभाव पड़ेगा। अनाज में पोषक तत्वों और प्रोटिन की कमी पाई जाएगी जिसके कारण संतुलित भोजन लेने पर भी मनुष्यों का स्वास्थ्य प्रभावित होगा।

जलवायु परिवर्तन के दुष्प्रभावों से भारतीय कृषि को बचाने के लिए हमें अपने संसाधनों का न्यायसंगत इस्तेमाल करना होगा व भारतीय जीवन दर्शन को अपनाकर हमें अपने पारम्परिक ज्ञान को अमल में लाना पड़ेगा। अब इस बात की सख्त जरूरत है कि हमें खेती में ऐसे पर्यावरण मित्र तरीकों को अहमियत देनी होगी जिनसे हम अपनी मृदा की उत्पादकता को बरकरार रख सकें व अपने प्राकृतिक संसाधनों को बचा सकें।

4. जलवायु परिवर्तन कि स्थिति में मोटे अनाजों के खेती की उपयोगिता

बाढ़ और सूखा जैसी प्राकृतिक आपदाओं की मार तो किसान सदियों से झेलते आये हैं। हालाँकि, पहले इनका असर क्षेत्रीय स्तर पर ज़्यादा दिखता था, लेकिन बीती आधी सदी से जलवायु परिवर्तन का असर इतना व्यापक दिख रहा है कि देश का हरेक किसान, फ़सल–चक्र, पैदावार और खाद्य सुरक्षा प्रभावित हो रही है। कृषि वैज्ञानिकों की सलाह है कि जलवायु परिवर्तन से बचाव के लिए जहाँ किसान, परम्परागत धान और गेहूँ की खेती की जगह मोटे अनाज की खेती को अपनाएँ, वहीं जनता भी अपनी थाली में मोटे अनाज को ज़्यादा अहमियत देना बहुत ही आवश्यक हो गया है। आम तौर पर धान, गेहूं और मक्का के मुक़ाबले मोटे अनाजों की पैदावार कम है। लेकिन देश के कुछ ज़िलों में वर्षा आधारित मोटे अनाजों की खेती की उपज धान्य फसलों से बेहतर है।

कम पानी या सूखे की स्थिति में भी मोटे अनाज की फसल हो सकती है। इससे किसानों को नुकसान भी कम होता है। जलवायु परिवर्तन से धान–गेहूं की फसल को हो रहे नुकसान का सामना करने के मोटे अनाजों की खेती को अपनाया जा रहा है। अभी जलवायु अनुकूल खेती के तहत कई गांवों में मोटे अनाज की खेती को प्रोत्साहित किया जा रहा है। अब इसे अधिक क्षेत्रों में ले जाने और अधिक किसानों को जोड़ने की योजना है। कृषि मंत्रालय भारत सरकार भी मोटे अनाज को बढ़ावा देने के लिए किसानों को प्रोत्साहित कर रही है, जिससे किसानों की आमदनी बढ़ने के साथ–साथ उन्हें पौष्टिक आहार भी मिलता रहे एवं उन्हें कुपोषण जैसी समस्या

से बचाया जा सके। मडुआ, ज्वार–बाजारा, सावां, कौनी, चीना आदि का रकबा बढ़ाने का प्रयास है। इसीलिए जलवायु अनुकूलन और अनाज उत्पादन बढ़ाने के लिए मोटे अनाज की खेती आज के समय की मांग है। मोटे अनाज की एक और विशेषता यह है कि उनका जीवनचक्र छोटा होता हैं, जो नमी का अभाव होने से पहले अपना जीवनचक्र पूरा करने में सहायक हैं। मोटे अनाज वाली फसलें तापमान में वृद्धि के लिए सहनशील होती हैं। इनके पत्तों की संरचना क्रेंज एनाटॉमी वाली होने से ये सी–4 पौधों की श्रेणी में आते है। इस गुण के कारण ये अधिक तापमान व कम कार्बन–डाइऑक्साइड में भी प्रकाश संश्लेषण कर पाते हैं।

मोटे अनाज वाली फसलों में अन्य खाद्य फसलों के मुकाबले सूखे और अधिक तापमान को सहन करने की क्षमता होती है। इसी वजह से जलवायु परिवर्तन का सबसे कम प्रकोप मोटे अनाज वाली फसलों पर पड़ता है। इन फसलों को आगामी दशकों में मूल भोजन के रूप में देखा जायेगा, ऐसी संभावनाएं है। भारत के 21 राज्यों में मोटे अनाज की खेती की जाती हैं। मोटा अनाज शुष्क भूमि के लिए रीढ़ की हड्डी हैं। मोटे अनाज अलग अलग तरह की मिट्टी और जलवायु परिस्थितियों को लेकर काफी कठोर प्रकृति के होते हैं। उन्हें आराम से किसी भी ऐसे स्थान पर उगाया जा सकता हैं जहां मुख्य अनाज फसलें नहीं हो पाती हैं। परिवर्तित जलवायु से भारत में बारिश की मात्रा बढ़ी हैं लेकिन इसकी अनियमितता में अपेक्षाकृत अधिक वृद्धि हुई हैं। सिंचाई के अभाव में मुख्य अनाज वाली फसल जैसे धान, गेहूं इत्यादि की खेती नुकसानदायक साबित हो सकती हैं।

मोटे अनाज जैसे कोदो, कंगनी, सवां, रागी, चेना आदि कठोर एवं सूखा प्रतिरोधी फसलें हैं, इन कदन्न फसलों को असिंचित क्षेत्र में आसानी से उगाया जा सकता है। जलवायु परिवरर्तन के कारण सूखा की स्थिति में धान की खेती नहीं की जा सकती है। मोटे अनाज वाली फसलों को कम पानी की आवश्यकता होती है और ये फसल कम समय में पककर तैयार भी हो जाती है। ये फसले लगभग 70–100 दिन में पककर तैयार जो जाती है जबकि गेहूं या चावल 120–150 दिन में तैयार होने वाली फसल है और इन्हे ज्यादा सिंचाई की आवश्यकता पड़ती है। मोटे अनाजों को 350–500 मिमी जबकि गेहूं या चावल को 600–1200 मिमी पानी की आवश्यकता होती है जो मोटे अनाजों की तुलना में बहुत ज्यादा है। 400 मिमी वर्षा वाले क्षेत्रों में ज्वार, 350 मिमी वालों में बाजरा व 350 मिमी से भी कम बारिश वाले क्षेत्रों में कांगनी, कुटकी, कोडो और प्रोसो मिलेट आराम से लगाए जा सकते हैं। मोटे अनाज तनाव की स्थिति में अपने फुटाव एवं विकास को रोक देते हैं, जिससे पौधे में पानी की खपत कम हो जाती हैं। मोटे अनाज के उत्पादन में कृषि रसायन जैसे उर्वरक, कीटनाशक इत्यादि का बहुत कम प्रयोग होता हैं, जो मृदा, जीव एवं वातावरण को रसायनों के दुष्प्रभाव से बचाता हैं व पारिस्थितिक तंत्र में संतुलन बना रहता हैं। इस दशक में जब हर देश टिकाऊ खेती की और अग्रसर हो रहा हैं, मोटे अनाज की खेती भारत को इस दिशा में एक कदम और आगे बढ़ने में मददगार साबित हो सकती है। मोटे अनाज जैसे दानेदार अन्न को शामिल करके फसल उत्पादन में विविधता लाने से खाद्य आपूर्ति सुनिश्चित हो सकती है, ग्रीन हाउस गैस (जीएचजी) उत्सर्जन में कमी आती है और पोषण से समझौता किए बिना जलवायु अनुकूलता को बढ़ावा मिलता है।

5. निष्कर्ष

निरंतर जलवायु परिवर्तन के कारण वर्षा एवं तापमान में अस्थिरता को देखते हुए कदन्न फसलें व मोटे अनाज की खेती खाद्य एवं पोषण सुरक्षा को मजबूती देगी। मोटे अनाज के उत्पादन में कृषि रसायन जैसे उर्वरक, कीटनाशक इत्यादि का बहुत कम प्रयोग होता हैं, जो मृदा, जीव एवं वातावरण को रसायनों के दुष्प्रभाव से बचाता हैं व पारिस्थितिक तंत्र में संतुलन बनाये रखता हैं। इस दशक में जब हर देश टिकाऊ खेती की ओर अग्रसर हो रहा हैं, मोटे अनाज की खेती भारत को इस दिशा में एक कदम और आगे बढ़ने में मददगार साबित हो सकती है। मोटे अनाज में जो पोषक तत्व होते हैं वो ऊर्जा, कार्बोहाइड्रेट, वसा, प्रोटीन, घुलनशील एवं अघुलनशील फाइबर,

एंटीऑक्सीडेंट, आयरन, ज़िंक और विटामिन के अच्छे स्रोत हैं। भारत एवं दूसरे विकासशील देशों में विटामिन एवं खनिज तत्वों की कमी को ख़त्म करने में मदद कर सकते हैं और कुपोषण जैसी विकराल समस्या से छुटकारा पाया जा सकता है। मोटे अनाज को तैयार होने में 45–70 दिन का समय लगता है जो कि चावल (120–140 दिन) के मुक़ाबले आधा है। साथ ही मोटे अनाज बेहद गरम तापमान से लेकर सूखे और जमीन के खारापन को भी बर्दाश्त कर सकते हैं। अतः मोटे अनाज की खेती के माध्यम से जलवायु परिवर्तन जैसी विकराल समस्या से लड़ा जा सकता है। आने वाले समय में मोटे अनाजों की खेती से स्वास्थ्य सुधार के भी कयास लगाए जा रहे है। मोटे अनाजों की खेती की संभावनाएं भारत के साथ–साथ अन्य देशों में भी बड़ी है। मोटे अनाजों की खेती को बढ़ावा देने के लिए तरह–तरह के प्रयास भी किये जा रहे हैं।